# इकाई 3 भाषाविज्ञान की पाश्चात्य परंपरा

## इकाई की रूपरेखा


3.0 उद्देश्य
3.1 प्रस्तावना
3.2 भाषाविज्ञान का सूत्रपात
3.3 तुलनात्मक भाषाविज्ञान
  3.3.1 भाषाओं का वर्गीकरण
  3.3.2 ध्वनि परिवर्तन और नियम
3.4 ऐतिहासिक भाषाविज्ञान
3.5 भाषा परिवर्तन
  3.4.1 ध्वनि परिवर्तन
  3.4.2 अर्थ परिवर्तन
  3.4.3 संरचना परिवर्तन
3.6 सारांश
3.7 अभ्यास प्रश्न


## 3.0 उद्देश्य

आधुनिक युग तक वैयाकरण अपनी अपनी भाषाओं का विशद, वैज्ञानिक अध्ययन करते रहे और पाणिनि के 'अष्टाध्यायी' जैसे अत्यंत सुगठित व्याकरण ग्रंथों की रचना हुई। आधुनिक युग में विभिन्न भाषाओं के ज्ञान के साथ उनकी तुलना करने की जिज्ञासा पैदा हुई जिससे उनकी संबद्धता का विश्लेषण किया जा सके। इससे भाषाओं के इतिहास को जानने की जिज्ञासा पैदा हुई जिससे भाषा में हुए परिवर्तनों को समझा जा सके। फिर विद्वान भाषाओं की रचना के विश्लेषण की ओर बढ़े, जिससे विश्व की भाषाओं के अध्ययन का एक वैज्ञानिक ढाँचा तैयार किया जा सके।

इस इकाई के अध्ययन के बाद आप :

- आधुनिक युग में भाषा अध्ययन के प्रति उन्मुखता का विवरण दे सकेंगे,
- तुलनात्मक भाषाविज्ञान की संक्षिप्त रूपरेखा दे सकेंगे,
- भाषाओं के वर्गीकरण का आधार समझा सकेंगे,
- ऐतिहासिक भाषाविज्ञान का परिचय दे सकेंगे,
- भाषा में हुए परिवर्तनों की दिशा और कारण बता सकेंगे, और
- संरचनात्मक भाषाविज्ञान की ओर प्रस्थान का वर्णन कर सकेंगे।

## 3.1 प्रस्तावना

आधुनिक युग वैज्ञानिक अध्ययन का युग है। पूर्व युग में चिंतकों और विचाराकें ने विविध विषयों पर चिंतन-मनन किया। आधुनिक युग में ही समाजविज्ञान, इतिहास, मनोविज्ञान आदि विशिष्ट अध्ययन क्षेत्रों की नींव पड़ी, जिससे विशेषज्ञता के अनुरूप विषय का विधि विज्ञान तैयार किया जा सके। इसी सिलसिले में भाषाओं के अध्ययन के लिए भाषाविज्ञान का निर्माण हुआ।

वैसे तो भाषाओं की रचना और प्रकार्यों में चिंतकों की रुचि आदि काल से रही है, लेकिन उस समय उनका ध्यान एक ही भाषा तथा उसके मानक रूप पर ही रहा। भाषा मात्र के अध्ययन के लिए, विशेषकर भाषाओं के अध्ययन के लिए एक संरचनात्मक ढाँचे के निर्माण

के लिए प्रयास आधुनिक काल की ही देन है। इसी अर्थ में भाषाविज्ञान व्याकरण की तुलना में एक व्यवस्थित अध्ययन क्षेत्र (discipline) है। यों कह सकते हैं कि भाषाविज्ञान भाषाओं के अध्ययन और वर्णन के लिए एक व्यवस्थित आधार देता है, जिससे संसार की भाषाओं का समान रूप से व्याकरण तैयार किया जा सके। अब भाषावैज्ञानिकों का यह यत्न है कि संसार की भाषाओं के लिए सार्वभौम व्याकरण की रूपरेखा प्रस्तुत की जा सके, क्योंकि भाषा मानव मन की क्षमता है ओर मन के विचार सभी भाषाओं में संरचना के स्तर पर समान ढंग से व्यक्त होते हैं।

आधुनिक युग में विश्व स्तर पर विभिन्न समाजों के एक दूसरे के संपर्क में आने पर एक दूसरे की भाषाओं में रुचि बढ़ी, परिचय बढ़ा। प्रारंभ में यूरोपीय विद्वानों ने संस्कृत के अध्ययन के आधार पर अनुभव किया कि संस्कृत, लैटिन, ग्रीक आदि भाषाओं में ध्वनि, रूप, शब्द, वाक्य रचना आदि कई भाषिक इकाइयों में कई समान तत्व हैं। विशद अध्ययनों के आधार पर ज्ञात हुआ कि ये सब भाषाएँ एक परिवार की हैं, भगिनी भाषाएँ हैं। भाषाविज्ञान का सूत्रपात हो चुका था। विद्वानों में विश्व की भाषाओं के साम्य तथा संबद्धता के प्रति रुचि जागी और भाषाओं की तुलना के आधार पर भाषाओं के पारिवारिक वर्गीकरण का कार्य तेज़ी से बढ़ा।

एक परिवार की भाषाओं में आंतरिक परिवर्तनों के कारण अलगाव शुरू होता है और परिवर्तन की निरंतर प्रक्रिया के कारण वे एक-दूसरी से दूर होती जाती है। हिंदी /पैर/, ईरानी /पात्र/, अंग्रेज़ी foot, संस्कृत /पाद/ संबद्ध शब्द हैं। इस अंतर को हम हर भाषा के ऐतिहासिक विकास में देख सकते हैं जैसे :

संस्कृत – कर्म→प्राकृत – कम्म→हिंदी – काम

भाषा के वर्तमान रूप के वर्णन में स्वाभाविक ही था उसका ऐतिहासिक विकास क्रम को जाना जाए। इसी जिज्ञासा ने ऐतिहासिक भाषाविज्ञान को जन्म दिया।

## 3.2 भाषाविज्ञान का सूत्रपात

हम यह कह सकते हैं कि भाषा मात्र के अध्ययन के लिए एक विज्ञान के रूप में भाषाविज्ञान का आविर्भाव आधुनिक काल में ही हुआ – विशेषकर 19वीं सदी में। पूर्व युगों में विद्वानों ने व्याकरण लिखा तो किसी एक भाषा का। उस समय उनका एक से अधिक भाषाओं से वास्ता भी शायद नहीं पड़ता था। अध्ययन के क्षेत्र में केवल पुरानी (Classical) भाषाओं की ही आवश्यकता होती थी, अतः बोलचाल की भाषाओं के अध्ययन-अध्यापन की आवश्यकता नहीं थी। आधुनिक युग में दो नई बातें सामने आईं। एक ओर, देशों या समुदायों का एक दूसरे से संपर्क बढ़ा और भाषाएँ जानने के अवसर बढ़े और सीखने की आवश्यकता बढ़ी। दो, आधुनिक युग में बोलचाल की भाषाओं को पुरानी भाषाओं से अधिक महत्व मिला और उनके व्याकरण लिखने की आवश्यकता हुई। लेकिन आधुनिक भाषाओं के व्याकरण लिखने की कोई परंपरा न होने के कारण पुरानी भाषाओं के व्याकरण को ही आधार बनाया गया। पहली बात से तुलनात्मक और उसी आधार पर ऐतिहासिक भाषाविज्ञान का प्रारंभ हुआ। दूसरी बात से वर्णनात्मक भाषाविज्ञान का प्रादुर्भाव हुआ।

कलकत्ता जब भारत की राजधानी थी, वहाँ के उच्चतम न्यायालय में 1783 सर विलियम जोन्स (1746-94) नामक जज नियुक्त हुए थे। उन्होंने भारतीय न्याय व्यवस्था के बारे में अधिक जानकारी के उद्देश्य से बड़ी कठिनाइयों का और पंडितों के विरोध का सामना करते हुए संस्कृत भाषा का अध्ययन किया। यह अध्ययन भाषाविज्ञान के सूत्रपात का आधार बना।

उन्होंने देखा कि संस्कृत, लैटिन और ग्रीक भाषाओं में ध्वनि, शब्दावली और रूपरचना की दृष्टि से बहुत साम्य है, जिसके संदर्भ में यही सोचा जा सकता है कि ये तीनों भाषाएँ किसी-न-किसी रूप में संबंधित हैं। 1786 में वे कहते हैं – 'सुदृढ़ समानता धातु मूलों और व्याकरणिक रूपों में समानता इतनी अधिक है कि उसे मात्र संयोग नहीं कहा जा सकता। यह समानता इतनी गहरी है कि उनका अध्ययन करने से पहले उन तीनों को किसी एक मूल भाषा से उत्पन्न मानने को मजबूर करती है, जो अब विद्यमान नहीं है।' जोन्स की इस उक्ति से भाषा तुलना के अध्ययन की नींव पड़ चुकी थी। अगली, यानी 19वीं शताब्दी में तुलनात्मक अध्ययन ने जोर पकड़ा और विद्वानों ने संसार की समस्त भाषाओं का अध्ययन कर उन्हें अलग-अलग भाषा परिवारों में वर्गीकृत किया।

## 3.3 तुलनात्मक भाषाविज्ञान

तुलनात्मक अध्ययन के दो आधार हो सकते हैं। हम किसी एक भाषा के ऐतिहासिक विकास से भाषा में हुए परिवर्तनों को समझ सकते हैं। जैसे, हिंदी में 'सत्य' से 'सच्च' और 'सच' बना। इससे अनुमान कर सकते हैं कि /त्य/ का समीकरण और तालव्यीकरण की प्रक्रिया से /च्च/ में परिवर्तन होता है। अगर यह अनुमान सही है तो हमें अन्य शब्दों में भी इसी प्रकार के परिवर्तन दिखाई देने चाहिए। हिंदी में इस परिवर्तन के जयादा परिचित अन्य उदाहरण तो नहीं मिलते, हाँ /त/ वर्ग की अन्य ध्वनियों में इसकी पुष्टि मिलती है। जैसे :

अद्य → आज  संध्या → संझा/साँझ  विद्युत – बिजली

भाषा के आंतरिक परिवर्तन के अध्ययन के लिए लिखित आधार की आवश्यकता पड़ती है। विभिन्न कालों में उस भाषा के रूपों के अध्ययन से हम परिवर्तन की दिशाओं को समझ सकते हैं। इसी अध्ययन को ऐतिहासिक भाषाविज्ञान की संज्ञा दी जाती है। हम तुलनात्मक भाषाविज्ञान की चर्चा के बाद इस इकाई में ऐतिहासिक भाषाविज्ञान की चर्चा आगे करेंगे।

तुलनात्मक अध्ययन का आधार दो भाषाओं में ध्वनि, रूप आदि स्तरों पर संबद्धता (correspondence) है। हिंदी और पंजाबी के मिलते-जुलते शब्द देखिए :

| हिंदी | पंजाबी | हिंदी | पंजाबी |
|---|---|---|---|
| सात | सत्त | पाँच | पंज |
| काम | कम्म | | |
| हाथ | हथ | | |

ऐतिहासिक रूप से हम जानते हैं कि सप्त – सत्त – सात के विकास क्रम में पंजाबी ने बीच के विकास को अपना लिया और हिंदी ने आगे परिवर्तन जारी रखा। अन्य उदाहरण भी इस बात की पुष्टि करते हैं। शब्दों की इस संबद्धता से हमें अध्ययन की गई दिशाएँ मिलती हैं। संबद्धता उन्हीं भाषाओं में मिलती हैं, जो एक ही परिवार की हों और जिनका विकास क्रम एक हो। अलग परिवारों की भाषाओं में मिलते-जुलते शब्द तो मिल जाते हैं, लेकिन ये इक्के-दुक्के होते हैं। अध्ययन का दूसरा आयाम यह है कि ध्वनि परिवर्तन की दिशा या क्रम की भी सूत्रता मिलती है, जो उन भाषाओं के ऐतिहासिक विकास को समझने में सहायक होती है। इस अध्ययन को हम तुलनात्मक भाषाविज्ञान की संज्ञा देते हैं।

### 3.3.1 भाषाओं का वर्गीकरण

**पारिवारिक वर्गीकरण**

भारत में कई भाषाएँ हैं। उत्तर में हिंदी, बांगला, पंजाबी, गुजराती आदि, दक्षिण में तमिल, तेलुगु, कन्नड़ आदि पूर्व में खासी, मणिपुरी आदि। गहन अध्ययन के बाद भाषावैज्ञानिक इन्हें चार भाषा परिवारों में बाँटते हैं। इसे निम्नलिखित आरेख से समझ सकते हैं :

1. भारोपीय परिवार
   - यूरोपियन भाषाएँ
   - भारत–ईरानी
     - ईरानी वर्ग
     - दरद (कश्मीरी)
     - भारतीय आर्य भाषाएँ (हिंदी, गुजराती, नेपाली आदि)

2. द्रविड भाषा परिवार
   - उत्तरी शाखा – कुड़ख, गोंडी आदि
   - मध्य शाखा – तेलुगु
   - दक्षिणी शाखा – तमिल, कन्नड, मलयालम, तुकु, कोडगु आदि

3. आस्ट्रिक परिवार – खासी, मुंडा भाषाएँ (संताली, खड़िया, हो, मुंडारी आदि)

4. चीनी-तिब्बती परिवार – मिज़ो, नागा भाषाएँ, मणिपुरी, नेवारी आदि।

अब सवाल यह है कि भाषाओं के पारिवारिक वर्गीकरण का आधार क्या है? हम परिवार की शाखाओं, उपशाखाओं की पहचान कैसे करते हैं? एक परिवार की भाषाएँ किसी एक मूल भाषा से विकसित होती हैं और विभिन्न परिवर्तनों के कारण उस परिवार की भाषाओं में भेद बढ़ते जाते हैं। फिर भी उनमें मूल तत्व सुरक्षित रहते हैं, जिन्हें हम तुलना से पहचान पाते हैं। निम्नलिखित मूल तत्व प्रायः समान होते हैं :

(i) आधारभूत शब्दावली (हाथ, संख्या 2 आदि, जल, चंद्र आदि)

(ii) ध्वनियाँ (अ, आ, क, ख आदि), ध्वनि की संबद्धता

(iii) लिपि

(iv) रूप (बहुवचन प्रत्यय, भूतकाल का प्रत्यय आदि)

(v) परसर्ग (को, में आदि) तथा प्रकार्यात्मक शब्द (और आदि)

भिन्न परिवारों की भाषाओं में इन तत्वों में लगभग कोई समानता नहीं मिलती। एक परिवार की भिन्न शाखाओं में समान तत्व या संबद्धता के स्थल कम होते हैं।

विस्तृत अध्ययनों के आधार पर भाषावैज्ञानिकों ने विश्व की भाषाओं को दस प्रमुख परिवारों में बाँटा है। ये हैं :

1. भारोपीय परिवार (हिंदी, अंग्रेज़ी, रूसी, संस्कृत आदि)
2. द्रविड परिवार (तमिल, तेलुगु आदि)
3. चीनी-तिब्बती (चीनी भाषा)
4. मलय-पालिनेशियन (मलय भाषा, भारत की आस्ट्रिक भाषाएँ)
5. सामी-हामी (अरबी, हीब्रू, उत्तर अफ्रीकी भाषाएँ)
6. दक्षिण अफ्रीकी (बांटू आदि)
7. जापानी-कोरियन
8. यूरल-अलटाइक (तुर्की, हंगेरी, फ़िनिश)
9. अमेरिकी भाषाएँ (एस्किमो, एज़टेक आदि)

इस वर्गीकरण में कई मतभेद हैं और कई भाषाओं के बारे में अब भी कोई निश्चित मत नहीं है।

**आकृतिमूलक वर्गीकरण**

हमने उल्लेख किया था कि एक परिवार की भाषाओं में रचना के समान तत्व मिलते हैं। भिन्न तत्व ही भिन्न परिवार सूचित करते हैं। इसी संदर्भ में हम भाषाओं को संरचना के आधार पर वर्गीकृत करते हैं, जिसे आकृतिमूलक वर्गीकरण कहा जाता है। आकृतिमूलक वर्गीकरण का आधार भाषा परिवारों की संकल्पना है। निम्नलिखित आरेख में इस वर्गीकरण की झलक मिल सकती है।

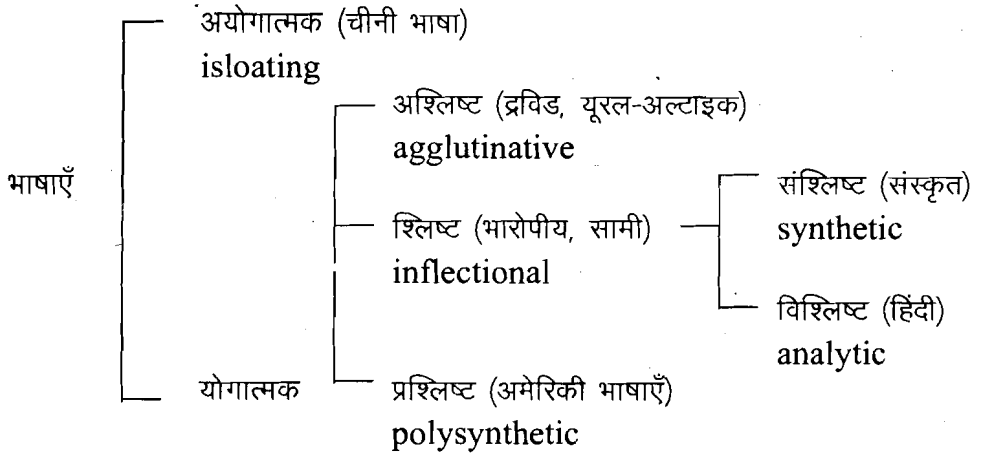


**आकृतिमूलक वर्गीकरण**

इससे आप जान सकते हैं कि एक परिवार की भाषा की आकृति की अपनी कुछ विशेषताएँ होती हैं, जो उस परिवार की सभी भाषाओं में दिखाई देती हैं।

### 3.3.2 ध्वनि परिवर्तन और नियम

भारोपीय परिवार की भाषाओं में ध्वनियों की संबद्धता पर अध्ययन में भाषावैज्ञानिकों की रुचि बढ़ी। उन्होंने अनुभव किया कि कुछ ध्वनि परिवर्तन बड़े ही व्यवस्थित ढंग से विश्लेषित किये जा सकते हैं। उदहारण के लिए संस्कृत के व्यंजन और अंग्रेज़ी के व्यंजनों में नियमित रूप से बदलते हैं। जैसे :

| | | संस्कृत | | अंग्रेजी |
|---|---|---|---|---|
| महाप्राण से अल्पप्राण | भ | भ्राता | ब | brother |
| | ध | बंध | t | bind |
| घोष से अघोष | द | दंत | t | teeth |
| | ग | ज्ञान | क | know |
| स्पर्श से संघर्षी | त | माता | | mother |
| | प | पिता | f | father |

ऐसी ही संबद्धताओं को ध्यान में रखते हुए ग्रिम नामक जर्मन भाषावैज्ञानिक ने घोषित किया कि किस तरह एक भाषा की ध्वनियाँ दूसरी भाषाओं में बदल जाती हैं। उनके विचारों को ग्रिम नियम (Grimm's Law) की संज्ञा दी जाती है। इसे उन्होंने बड़े 'वैज्ञानिक' तथा रोचक ढंग से एक सरल आरेख के रूप में प्रस्तुत किया।

अघोष
अल्पप्राण

घोष
अल्पप्राण

घोष
महाप्राण

(नोट : यहाँ संघर्षी को महाप्राण का ही दूसरा रूप गिना गया है।)

नियम की घोषणा के साथ ही विद्वानों ने अपवादों की सूची देना शुरू कर दिया। हम देखते हैं कि /बंध/bind, /दुहिता/daughter के प्रारंभिक व्यंजन में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। ऐसे अपवादों के विराकरण के लिए अतिरिक्त नियम बनाए जाते रहे। 19वीं शताब्दी में भाषावैज्ञानिकों ने नियमों को ढूँढ़ने और माँजने में बड़ा परिश्रम किया।

इसी शृंखला में वेर्नर नामक जर्मन भाषावैज्ञानिक ने अपवादों के स्पष्टीकरण स्वरूप अन्य नियम बनाए जिन्हें वेर्नर नियम की संज्ञा दी जाती है। फिर भी वे सारे ध्वनि परिवर्तनों के लिए समाधान नहीं दे पाए। विद्वानों ने अनुभव किया कि भाषा नियमों से बँधकर नहीं चलती। नियम शब्द से ही लोग असंतुष्ट हो गए। दूसरी तरह कुछ भाषावैज्ञानिकों ने 'नियम' की संभावना से आश्वस्त थे। वेर्नर ने जब किन्हीं प्रमुख अपवादों का समाधान प्रस्तुत किया तो इससे नियमों में विद्वानों आस्था बढ़ी। उन्होंने घोषणा की कि ध्वनि संबंधी नियम अपवाद रहित हैं। अन्य विद्वानों ने व्यंग्य में उन्हें 'नव्य वैयाकरण' (neogrammarians) की संज्ञा दी और उनकी खिल्ली उड़ाई।

इसी खींचातानी में तुलनात्मक भाषा।वैज्ञान इतिश्री हो गई। लेकिन तुलनात्मक अध्ययन के सिलसिले में विद्वानों ने बहुत-सी भाषाओं के आंतरिक ध्वनि परिवर्तनों के ऐतिहासिक क्रम संबंधी विस्तृत जानकारी प्राप्त कर ली थी। सहज ही, वे प्रस्तुत सामग्री के आधार पर भाषाओं के ऐतिहासिक विकास, ध्वनि, अर्थ आदि में परिवर्तन तथा परिवर्तन के कारण आदि में रुचि लेने लगे। इससे ऐतिहासिक भाषाविज्ञान का श्रीगणेश हुआ।

## 3.4 ऐतिहासिक भाषाविज्ञान

ऐतिहासिक भाषाविज्ञान के प्रादुर्भाव का आधार है भाषा में होने वाले परिवर्तनों का एहसास। कालक्रम के साथ भाषा के स्वरूप में निरंतर परिवर्तन होता है, जिसकी तुलना नदी के प्रवाह के साथ की जाती है। नदी का अस्तित्व नित्य है, लेकिन उसकी स्थिति और स्वरूप में बराबर परिवर्तन होता है। भाषा के संदर्भ में 'सरित प्रवाह', 'बहता नीर' आदि उक्तियाँ इसी का इंगित करती हैं। परिवर्तन के वैज्ञानिक विश्लेषण तथा विवरण से भाषा के इतिहास (यानी क्रमिक विकास) का ज्ञान मिलता है। इस तरह भाषा में परिवर्तनों का अध्ययन ऐतिहासिक भाषाविज्ञान का सबसे प्रमुख लक्ष्य है।

ऐतिहासिक भाषाविज्ञान वैसे तो एक ही भाषा के इतिहास और उसमें हुए परिवर्तनों का अध्ययन करता है। इससे मिले तथ्यों का तुलनात्मक भाषाविज्ञान में फिर उपयोग किया जाता है। इस तरह बाद में दोनों मिलकर समान लक्ष्य की खोज में कार्य करते हैं। इस कारण दोनों को मिलाकर तुलनात्मक-ऐतिहासिक विश्लेषण नामक समन्वित अध्ययन का क्षेत्र विकसित किया गया।

ऐतिहासिक भाषाविज्ञान अपने में उपयोगी अध्ययन क्षेत्र है। विद्वानों ने इसके अनुप्रयोगों की परिकल्पना की और भाषा के मूल उत्स तक पहुँचने का प्रयास किया। हम जानते हैं कि संस्कृत, लैटिन, ग्रीक सगिनी भाषाएँ हैं। इस बात की भी संभावना की जा सकती है कि ये भाषाएँ किसी एक मूल भाषा से परिवर्तनों के कारण अलग हुई हों। परिवार की सभी भाषाओं के इतिहास क्रम से हम संभवतः अनुमानित रूप से उस पूर्ववर्ती (कल्पित) भाषा का पुनर्निर्माण कर सकते हैं, जिसका कोई प्रमाण या ऐतिहासिक प्रलेख उपलब्ध नहीं है। इस अध्ययन की शाखा को पूर्वरूप निर्धारण (glottochhronology) की संज्ञा दी जाती है। उदाहरण के तौर पर भाषावैज्ञानिक भारोपीय परिवार के संदर्भ में किसी प्राक् भारोपीय भाषा (Proto-Indo European) की कल्पना करते हैं, उसके स्वरूप का निर्धारण करते हैं और उससे संस्कृत आदि भाषाओं के ऐतिहासिक क्रम का अनुमान करते हैं।

भाषा के पूर्व रूपों के अध्ययन के लिए ऐतिहासिक भाषाविज्ञान ने कई प्रविधियों का विकास भी किया है। शब्दावली सांख्यिकी (Lexicostatistics) इसी प्रकार का एक साधन है जो भाषाओं के अलग होने के समय को ठीक से बताने का दावा करता है। हम जानते हैं कि भाषाओं में ध्वनि परिवर्तन कम ही होते हैं और शब्दों की तुलना से उन्हें ढूँढ़ा जा सकता है। इसी तरह भाषा के आधारभूत शब्दों में बहुत कम परिवर्तन होते हैं। ऐतिहासिक भाषावैज्ञानिकों ने पता लगाया है कि हजार वर्ष में आधारभूत शब्दावली में लगभग 1.5% शब्द बदल सकते हैं। इस तरह दो भाषाओं की आधारभूत शब्दावली में अंतर के आधार पर उनके अलगाव की गणना की जा सकती है। यूरोपीय भाषाविदों ने गणना की है कि अंग्रेज़ी और जर्मन भाषाएँ पहले एक थीं और आज से लगभग 1600 साल पहले ई. 400 के आसपास अलग हुईं।

ऐतिहासिक भाषाविज्ञान के और भी कई अनुप्रयोग हैं। न केवल हम भाषा के क्रमिक विकास का इतिहास लिख सकते हैं, इस अध्ययन से प्राप्त सूचनाओं को शब्दकोश में समाविष्ट कर सकते हैं। भाषा का इतिहास पूर्ववर्ती साहित्य के अध्ययन के लिए भी आवश्यक है।

भाषा परिवर्तन ऐतिहासिक भाषाविज्ञान का प्रमुख लक्ष्य है। हम भाषा परिवर्तनों के बारे में विस्तार से अगले प्रकरण में पढ़ेंगे।

## 3.5 भाषा परिवर्तन

भाषाएँ प्राणी की तरह जीवंत व्यवस्थाएँ हैं – जन्म लेती हैं, बढ़ती हैं, विकास करती हैं और अस्तित्वविहीन भी हो जाती हैं। जिस तरह जीवित प्राणी में परिवर्तन अवश्यंभावी है, भाषाओं में भी परिवर्तन सहज और स्वाभाविक हैं। जिस तरह शरीर के विभिन्न अंगों में परिवर्तन होते हैं, भाषा के विभिन्न तत्वों यथा ध्वनि, शब्दावली, शब्दार्थ, रूप, वाक्य संरचना आदि में परिवर्तन होते हैं। इन परिवर्तनों के प्रकार और कारणों के बारे में आगे अध्ययन करेंगे।

### 3.5.1 ध्वनि परिवर्तन

ध्वनि परिभाषा के विकास का सबसे प्रमुख अभिलक्षण है। भाषा में नई ध्वनियाँ आ जाती हैं, पुरानी ध्वनियाँ खत्म हो जाती हैं, नये संयुक्ताक्षर बनते हैं या पुराने संयुक्ताक्षर टूटते हैं। भाषा के इतिहास से ही हमें इन परिवर्तनों के बारे में पता चलता है।

ध्वनि परिवर्तन की दिशाएँ निम्न प्रकार से हैं :

1) **संगम (Merger)** : इसमें दो ध्वनियाँ मिलकर एक हो जाती हैं। जैसे हिंदी में /श/ तथा /ष/ का उच्चारण एक हो गया है।

2) **विच्छेद (Split)** : इसमें एक ध्वनि परिवर्तन के कारण दो ध्वनियों में बदल जाती है। हिंदी /ड/ का विकास के कारण /ड/ तथा /ड़/ दो ध्वनियाँ अस्तित्व में आईं।

3) **आगम (Epenthesis)** : इसमें शब्द के आदि, मध्य या अंत में स्वर या व्यंजन का आगम होता हे। जैसे स्टेशन → इस्टेशन (हिंदी), शर्म → शरम, स्टेशन → सटेशन (पंजाबी), लिस्ट → लिस्टु (तेलुगु)।

4) **लोप (Loss)** : इसमें शब्द के आदि, मध्य या अंत में स्वर या व्यंजन का लोप हो जाना है। जैसे, अंग्रेजी कमान्ड → हिंदी कमान, अढ़ाई → ढाई, खरीददार → खरीदार।

5) **विपर्यय** (Transposition) : इसमें शब्द में आए दो स्वर या व्यंजन आपस में स्थान परिवर्तन कर लेते हैं। जैसे, लखनऊ → नखलऊ, पागल → पगला, यहाँ → ह्याँ (बोलियों में)।

6) **परिवेश पर आधारित ध्वनि परिवर्तन** : (क) समीकरण (assimilation) – विषय ध्वनियों का समान बनना। मकुट→मुकट, अष्ट→अट्ठ, (ख) विषमीकरण (dissimilation) – समान ध्वनियों का भिन्न (विषम) होना। काक - काग, कंकण - कंगन, (ग) तालव्यीकरण – कै→चेय् (हाथ - तेलुगु), (घ) घोषीकरण - शती→सदी, (ड.) महाप्राणीकरण - हस्त→हाथ, अष्ट→आठ, (च) दीर्घीकरण – सत्य→सच्च→साँच आदि।

ध्वनि परिवर्तन सिर्फ़ उच्चारण को ही प्रभावित नहीं करता, बल्कि भाषा की ध्वनि व्यवस्था में भी परिवर्तन लाता है। इस व्यवस्था परिवर्तन में एक से अधिक परिवर्तन की दिशाएँ काम करती हैं। उदाहरण के लिए पंजाबी भाषा से घोष महाप्राण ध्वनियों का लोप हुआ। स्वर मध्य में अल्पप्राणीकरण की प्रक्रिया आई। 'आधार' शब्द का उच्चारण /आदार/ हुआ [लिपि में परिवर्तन नहीं है, केवल उच्चारण में है]। शब्दारंभ में अघोषीकरण की प्रक्रिया दिखाई देती है। घर का उच्चारण /खर/ हुआ। दोनों स्थितियों में महाप्राण के स्थान पर तान (tone) का आगम हुआ। इस तरह भाषाओं में ध्वनि परिवर्तन नई व्यवस्थाओं को जन्म देता है।

ध्वनि परिवर्तन के कारण कई हैं। ध्वनि परिवर्तन के दो प्रमुख कारक तत्व हैं – सादृश्य (analogy) तथा प्रयत्न लाघव (मुखसुख) यानी उच्चारण की सहजता। अज्ञान, विदेशी भाषाओं की ध्वनियों का आगमन, विदेशी ध्वनियों के उच्चारण की अक्षमता आदि की ध्वनि परिवर्तन के अन्य कारण हैं।

### 3.5.2 अर्थ परिवर्तन

भाषा में शब्दों के अर्थ में निरंतर परिवर्तन होता है। इससे भाषा की शब्दावली (lexicon) में भी परिवर्तन आता रहता है। अर्थ परिवर्तन के कई कारण हैं। हम नई संकल्पनाओं के लिए पुराने प्रचलित शब्दों का इस्तेमाल करते हैं। जैसे 'पैर' शब्द का उपयोग कई भाषाओं में फर्नीचर के पायों के लिए होता हे। यह सादृश्यमूलक अर्थ विस्तार है। लोगों या विचारों के प्रति हमारा दृष्टिकोण भी प्रमुख कारण है। 'पुंगव' एक युग में पंडित, ज्ञानी के अर्थ में प्रयुक्त होता था। लेकिन ढोंगी विद्वानों के लिए मज़ाक में इस शब्द का प्रयोग हुआ, तो पोंगा (ध्वनि परिवर्तित रूप) बाद में अविवेकी व्यक्ति के लिए भिन्न अर्थ में प्रयुक्त होने लगा। हम सामाजिक व्यवहार में अमंगलसूचक या अशोभनीय शब्दों का प्रयोग नहीं करते, उनकी जगह भिन्न शब्दों का प्रयोग करते हैं। 'मरना' के लिए 'स्वर्ग सिधारना' उदात्तीकरण के कारण है। भय के कारण साँप को 'कीडा' कहना लघुता लाने का प्रयास है। इसके अन्य उदाहरण हैं विधवा होने पर 'सिंदूर पूछना' कहना या चेचक की बीमारी को 'शीतला' कहना। मल विसर्जन के लिए 'नित्य कर्म' या 'दिशा जाना' या 'शौच जाना' (शुचि-शुद्धता) शोभनीय तथा सभ्य अभिव्यक्ति के लिए है।

अर्थ परिवर्तन की तीन प्रमुख दिशाएँ हैं :

1) **अर्थ विस्तार** : इसमें शब्द के मूल अर्थ का विस्तार होता है और शब्द का अर्थ व्यापक संदर्भ में प्रयुक्त होता है। 'तेल' का मूल अर्थ था तिल से प्राप्त तैल। अब हम इसका प्रयोग सभी तेलों के लिए करते हैं। आज पेट्रोल भी 'तेल' कहा जाता है। इस तरह के अन्य शब्द देखिए (कोष्ठकों में क्रमशः मूल अर्थ और वर्तमान विस्तृत अर्थ दिये गये हैं) – कुशल (कुश लाने में होशियार व्यक्ति, हर काम मे

निपुण व्यक्ति), स्याही (काली स्याही, सब रंगों की स्याही), पशु (गोधन, सभी जानवर), प्रवीण (वीणा बजाने में कुशल, हर कार्य में कुशल)। भाषा के मुहावरेदार प्रयोग अर्थ विस्तार के ही उदाहरण हैं। अब हम कार्यालय के head की बात करते हैं। मंत्रालय के स्कंध, खिड़की का पल्ला, बैंक की शाखा आदि शब्द विस्तृत अर्थ में मुहावरेदार प्रयोग हैं। हम सहज ही ऐसे सैकड़ों शब्दों का निर्माण करते हैं।

2) **अर्थ संकोच** : इस प्रक्रिया में मूल अर्थ सिकुड़कर सीमित अर्थ देता है। संस्कृत में 'मृग' का अर्थ था प्राणी, जानवर। इसी अर्थ में हम सिंह को 'मृगराज' कहते हैं। आज यह अर्थ सीमित ढंग से केवल 'हिरन' के अर्थ में प्रयुक्त होता है। अंग्रेज़ी में meat खाद्य पदार्थ का अर्थ देता था, अब केवल 'मांस' का अर्थ देता हे। ऐसे अन्य कुछ उदहारण देखिए – धान (< धान्य) (अनाज, चावल की फ़सल)। अर्थ संकोच का एक प्रमुख कारण है। जब विदेशी भाषाओं से शब्द आते हैं, तो भाषा में दो पर्याय हो जाते हैं। उस स्थिति में उनमें अक्सर अर्थ बँट जाते हैं या संदर्भ अलग हो जाते हैं। अब हम डॉक्टर और वैद्य में अंतर करते हैं। 'दरिया' का मूल अर्थ 'नदी आदि जलाशय' था लेकिन आज इसे हम सिर्फ़ 'सागर' के अर्थ में प्रयुक्त करते हैं।

3) **अर्थादेश** : इस शब्द का अर्थ है 'अर्थ बदल जाना'। संस्कृत में 'दुहिता' का अर्थ था 'गाय दुहने वाली'। अब यह 'पुत्री' के अर्थ में प्रयुक्त होता है। अक्सर शब्द का विपरीत अर्थ में भी प्रयोग होने लगता है। संस्कृत में असुर का अर्थ था 'देव', अब वह दानव का अर्थ देता है और सादृश्य के कारण उससे 'सुर' शब्द बना लिया गया है। 'राग' का अर्थ प्रेम है, बांगला में वह 'क्रोध' का अर्थ प्रकट करता है।

अर्थ के परिवर्तन को विद्वान अर्थोत्कर्ष (उत्कृष्ट अर्थ देना) और अर्थापकर्ष (निकृष्ट अर्थ देना) जैसी मूल्यपरक प्रक्रियाओं से भी व्यक्त करते हैं। संस्कृत में 'साहस' का अर्थ था 'अनाचार'। आज उसके अर्थ में उत्कर्ष हुआ है और 'साहस' एक गुण है। हिंदी में पोंगा, लुच्चा (< लुंचित व्यक्ति, मुनि) अर्थापकर्ष के उदाहरण हैं।

### 3.5.3 संरचना परिवर्तन

संरचना परिवर्तन में रूप, पदबंध, वाक्य संरचना आदि सभी व्याकरणिक इकाइयों में परिवर्तन परिलक्षित होते हैं। संस्कृत में हिंदी तक के विकास क्रम में संज्ञा, क्रिया आदि की रूपावलियों में व्यापक परिवर्तन हुए। इस संदर्भ में आप हिंदी के विकास के बारे में एम एच. डी-6 के सातवें खंड में पढ़ चुके हैं।

आज भी भाषा में धीरे-धीरे परिवर्तन हो रहे हैं जिसके हम प्रत्यक्षदर्शी हैं। मुझे के स्थान पर 'मेरे को' का प्रयोग, 'मैंने कह दिया है/मैंने कह रखा है' के स्थान पर 'मैंने कहा हुआ है' आदि परिवर्तन के सूचक हैं। हिंदी में ही लगभग 100 साल पहले लेखक 'कहने नहीं पाया', 'करने वहीं सकता' का प्रयोग करते थे। आज 'कह नहीं पाया', 'कर नहीं सकता' परिवर्तन के उपरांत स्थिर हो चुके हैं।

## 3.6 सारांश

आधुनिक युग में भाषाविज्ञान के प्रादुर्भाव से पहले भाषिक अध्ययन का लक्ष्य था किसी भाषा का व्याकरणिक विश्लेषण। इस लक्ष्य की पूर्ति में भी पाणिनि के 'अष्टाध्यायी' जैसे विख्याय व्याकरण ग्रंथ लिखे गए। पाणिनि, पंतजलि तथा यास्क जैसे व्याकरण ग्रंथ लिखे गए। पाणिनि, पंतजलि तथा यास्क जैसे व्याकरणों ने संस्कृत भाषा के संदर्भ में दार्शनिक चिंतन किया और अर्थ की सत्ता, वाक् आदि संकल्पनाओं पर विस्तृत चर्चा की। आधुनिक

काल तक ये कार्य भाषा विशेष तक ही सीमित रहे। आधुनिक युग में विश्व स्तर पर देश एक दूसरे के निकट आए और एक दूसरे की भाषाओं को जाना। भाषाओं की सम्बद्धता तथा परस्पर आदान-प्रदान को जानने की रुचि पैदा हुई। इस रुचि के कारण भाषाओं की तुलना का कार्य शुरू हुआ जिस हम तुलनात्मक भाषा विज्ञान कहते हैं। तुलनात्मक भाषाविज्ञान एक परिवार की भाषाओं में ध्वनि, रूप, शब्द, वाक्य आदि इकाइयों में सम्बद्धता ढूँढ़ने का यत्न करता है और उनमें अंतर के कारणों का पता लगाता है। तुलनात्मक भाषाविज्ञान की शुरुआत प्रारंभ में भारोपीय परिवार की भाषाओं के संदर्भ में हुई। लेकिन बाद में विश्व के अनेक भाषाओं की सम्बद्धता के अध्ययन के फलस्वरूप भाषा का पारिवारिक वर्गीकरण तुलनात्मक अध्ययन का एक उपयोगी परिणाम सिद्ध हुआ। परिवारों की सम्बद्धता उनकी रचना या आकृति पर आधारित होता है। एक परिवार की भाषा में रचना की कई विशेषताएँ दिखाई पड़ती हैं। इस तरह पारिवारिक वर्गीकरण से आगे भाषाओं के आकृतिमूलक वर्गीकरण की स्थापना हुई। हम आज भी सार्वभौम व्याकरणों की तलाश में भाषाओं की संरचनाओं के समान तत्व ढूँढ़ते हैं। एक परिवार की भाषाएँ किसी मूल रूप से विकसित होकर तब अलग होती हैं जब उनमें अंतर बढ़ता है। इस अंतर का प्रमुख कारण यह है कि भाषा निरंतर परिवर्तनशील होती है। आंतरिक और बाह्य कारणों से भाषा में परिवर्तन निरंतर होते हैं। ऐतिहासिक भाषा विज्ञान, तुलनात्मक भाषाविज्ञान का परिवर्तित रूप है जो भाषा के परिवर्तन के क्रम को भाषा के इतिहास के रूप में देखता है। ऐतिहासिक भाषाविज्ञान भाषा के इतिहास क्रम को जानने के प्रयत्न में कुछ ऐसे उपादान भी ढूँढ़ता है जो भाषिक अध्ययन को वैज्ञानिक ढंग से खोज का क्षेत्र बनाता है। भाषाओं में होने वाले परिवर्तनों के आधार पर यह भाषा परिवार के पूर्वरूप का अनुमान कर सकता है और उसका पुनर्निर्माण कर सकता है। इसी तरह परिवर्तन के अनुपात का अंदाज़ हो तो हम यह बता सकते हैं कि किस समय दो भाषाएँ अलग हुई होंगी। इस तरह ऐतिहासिक भाषाविज्ञान हमें भाषा के अध्ययन के अन्य आयाम देता है।

भाषा के वर्तमान स्वरूप के अध्ययन में भाषाविज्ञान की रुचि शताब्दी के आरंभ में जागी। भाषावैज्ञानिक यह जानना चाहते थे कि क्या एक सार्वभौम व्याकरण तैयार किया जा सकता है जो संसार की सभी भाषाओं के अध्ययन में सहायक हो। इस नई खोज की प्रवृत्ति के कारण ऐतिहासिक भाषाविज्ञान में लोगों की रुचि घटी और संरचनात्मक भाषाविज्ञान अस्तित्व में आया। इसके बारे में आप अगली इकाई में पढ़ेंगे।

## 3.7 अभ्यास प्रश्न

**1. निबंधात्मक प्रश्न**

(1) तुलनात्मक भाषाविज्ञान का प्रारंभ कैसे हुआ और उसका क्या योगदान है?

(2) ऐतिहासिक भाषाज्ञान का विषय क्षेत्र क्या है?

(3) विश्व की भाषाओं का वर्गीकरण किन आधारों पर किया जाता है?

**2. टिप्पणियाँ**

(1) ध्वनि परिवर्तन, दिशाएँ और कारण

(2) अर्थ परिवर्तन, दिशाएँ और कारण

(3) भारत के भाषा परिवार